शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 फरवरी 2024
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

मीरा के काव्य में सामन्ती रूढ़ियों का विद्रोह

नीलम सिन्हा (शोधार्थी)
डॉ.अवधेश कुमार जौहरी (शोध निर्देशक)
संगम विश्वविद्यालय
भीलवाड़ा, राजस्थान, भारत

मध्यकाल की प्रसिद्ध भक्त मीरा राजस्थान के राठौर राजवंश की पुत्रवधू तथा प्रसिद्ध सिसोदियावंश की कुलवधू थीं। मध्यकालीन राजपूत क्षत्रीय वंश राजाओं, सामंतों और सैनिकों का वंश था। इनके अभ्युदयकाल में ब्राह्मणों द्वारा इनकी वीरता और शौर्य पर आधारित वंशावलियों की खोज की गयी। ये वंश युद्ध को अपने जीवन का सबसे बड़ा धर्म समझते थे। इनके समाज में सत्ता और संपत्ति से जुड़ी हुई मैत्री और बैर इतने प्रचलित थे कि इनके पास युद्ध को छोड़कर जीवन के किसी स्वाभाविक विधान के लिए प्रायः कोई गुंजाइश नहीं हुआ करती थी। उनके कुटुंब इस युद्ध की छाया में पलते थे। परस्पर शत्रुता के निरंतर दबाव में रहने के कारण यह समाज अपनी स्त्रियों के प्रति बहुत रूढ़िवादी और अनुदार था। इनके वंश की स्त्रियों पर पिता और पति, दोनों के कुलों की मर्यादा का भार माना जाता था। अल्पायु में विवाह के अतिरिक्त विधवा के लिए सती हो जाने का विधान भी इसी मर्यादा की रक्षा के लिए था। कुल की मर्यादा इतनी संवेदनशील हुआ करती थी कि स्त्री द्वारा अपनी इच्छा की स्वाभाविक अभिव्यक्ति मात्र से इसके टूट जाने का खतरा था। इन्हीं कारणों से इन परिवारों की स्त्रियों पर अनेक बंदिशें लगायी जाती थीं। पिता या पति के घर में उसका स्थान अन्तःपुर था।"[1]

उनका संवाद-व्यवहार या साक्षात्कार परिवार के पिता भाई, पति जैसे पुरूषों तथा परिवार की स्त्रियों या दासियों तक सीमित था। लज्जाशीलता, विनय और आज्ञाकारिता उसका धर्म था। निजी इच्छाओं के त्याग और सहनशीलता आदि से उसकी महिमा का गान किया जाता था। उसके पातिव्रत्य, चरित्र और आचरण संबंधी विधि-निषेध बड़े कठोर थे तथा इनमें किसी भी परिस्थिति में रियायत की संभावना नहीं थी। मीरा को यही रूढ़िग्रस्त सामंती समाज मिला था। मीरा के पति कुंवर भोजराज तथा श्वसुर महाराणा सांगा की मृत्यु के बाद राणा विकमजीत उनका अभिवावक बन बैठा। मीरा की कृष्णभक्ति और साधु संगति जैसी गतिविधियों ने उसे कुपित किया और वह मीरा के प्रति अमानवीयता की हद तक निर्मम होता गया। उसने मीरा के बाह्य समाज से मिलने-जुलने पर अनेक प्रकार से रोक लगाई। मीरा के पदों में राणा द्वारा उन पर पहरे बैठाने और ताले जड़वा देने का उल्लेख आया है, किन्तु मीरा एक निर्भय स्वाधीनचेता स्त्री थी। मीरा ने अडिग रह कर राणा के अत्याचारों का सामना किया।"[2]

मीरा की स्वाधीनता से राणा का पूरा नियंत्रण तंत्र अस्त-व्यस्त हो उठा था। राणाकुल की स्त्रियों ने भी मीरा की स्वाधीनता को

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 फरवरी 2024
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

स्वच्छन्दता माना और राणा के मीरा विरोध में सहायक हुई। मीरा के पदों में सास-ननद द्वारा प्रताड़ित होने के संदर्भ भी आये हैं। मीरा की भक्ति का सबसे बड़ा बाधक राणा विकमाजीत था। इसीलिए मीरा ने अपने पदों में सबसे ज्यादा इस राणा के अत्याचारों का वर्णन किया है। यह राणा विधवा मीरा का संरक्षक होने के साथ-साथ शासक भी था। उसके पास धन और सत्ता का बल तो था ही, इसके अतिरिक्त पुरूष होने के कारण उसे स्वाभाविक रूप से समाज में विशेष अधिकार प्राप्त था। रूढ़िवादी सामंती समाज में राणा के अत्याचारों का समर्थन था। इस प्रकार राणा ने भगवद्भक्ति को जीवन का एक मात्र उद्देश्य मानने वाली मीरा को अनेक प्रकार से आतंकित किया। उसके प्रचार तंत्र ने मीरा के बारे में समाज में अपवाद भी प्रचारित किये, किन्तु मीरा इससे विचलित नहीं हुई, बल्कि कृष्ण के प्रति अपनी निष्ठा और समर्पण में और दृढ़ होती गई।

मीरा के पदों में राणा पुरूषवर्चस्ववादी सामंती व्यवस्था का सबसे निरंकुश, अमानवीय और रूढ़िवादी चरित्र है। मीरा स्वरचित पदों को अपनी साधु मंडली में गाती थीं। वस्तुतः कृष्ण और कृष्ण भक्त ही मीरा का सबसे बड़ा संबल थे। मीरा के पदों की लोकप्रियता बताती है कि सामंती नैतिकताओं का संरक्षक राणाकुल और रूढ़िवादी समाज उनका कितना ही बड़ा विरोधी क्यों न रहा हो, सामान्य लोक के चित में मीरा की सहज स्वीकृति थी। इस लोकस्मृति की परंपरा से भी हमें मीरा की वह छवि प्राप्त होती है जो स्वाधीन, गरिमामयी और साधु है। इस लोक की शक्ति से ही मीरा जैसी विधवा स्त्री ने राणा और समस्त स्त्री विरोधी समाज का सामना किया। मीरा ने अपने पदों में राणा के प्रत्येक अत्याचार का भेद खोलकर उसे सीधी चुनौती दी। उन्होंने उसके प्रत्येक कपट का सिर्फ सामना ही नहीं किया, अपितु अपनी निर्भयता से उसके सत्ता और शक्ति के अहंकार को बौना कर दिया।"[3]

मध्यकालीन सामंती समाज में राजपूत क्षत्रीय जातियों के पुरूषार्थ को जर, ज़ोरू और ज़मीन के भोग के संदर्भ में परिभाषित किया जाता था। ऐसे वंश की विधवा स्त्री का अपने परिवार के संरक्षक पुरूष की खुली अवहेलना कितनी साहसपूर्ण रही होगी। मीरा ने राणा का नाम लेकर उसे धिक्कारा तथा स्पष्ट कहा कि वह किसी भी उपाय से उन्हें उनके आराध्य कृष्ण की भक्ति से डिगा नहीं सकता। चरित्र हत्या को सामंती समाज अपना सबसे बड़ा हथियार समझता था। राणा ने भी अपने स्वतंत्र आचरण की घोषणा करने वाली मीरा की बदनामी की। इन प्रसंगों से मीरा और दृढ हुई और उन्होंने राणा को स्पष्ट चेतावनी दी :

"राणा जी म्हाने या बदनामी लगे मीठी
कोई निन्दो कोई बिन्दो मैं चलूंगी चाल अनूठी' [4]

मीरा ने सत्संग की निंदा करने वाले को दुर्जन माना है और वे उन्हें भी साफ-साफ धिक्कारती हैं। पति को परमेश्वर कहने वाले सामंती नैतिकता की कोई परवाह न करते हुए मीरा ने गिरधरनागर को अपना सच्चा प्रीतम घोषित किया। मीरा की भक्ति की रीति न्यारी थी। उन्होंने स्पष्ट कहा है कि कृष्ण के रूप में उन्हें अविनाशी सुहाग प्राप्त हुआ है। कृष्ण को अपने योग्य पूर्ण वर घोषित करते हुए उन्होंने राणा वंश की स्त्री को नियंत्रण में रखने वाली आचार संहिता को भारी भोट पहुंचाई।[5] मीरा की स्वाधीनता राणाकुल के लिय अनवरत भारी संकट बनती गई। यही कारण है कि राणा ने मीरा की

हत्या के भी अनेक उपाय किये। मीरा की भक्ति, उनकी स्पष्टवादिता समाज के लिए चुनौती बनते गये। वस्तुतः मीरा ने बार-बार जिस कुल मर्यादा को तोड़ने की बात कही है या स्त्री दमन और शोषण में लगी यह छकुलमर्यादा थी जो उसे जीवितव्य मानकर निष्प्राण वस्तु समझती थी। मीरा के कुटुंब की स्त्रियों को गहने, कपड़े, खाने का भले ही सुख हो, किन्तु उनका अपने शरीर, अपनी आत्मा पर कोई अधिकार नहीं था। यह अनायास नहीं है कि मीरा ने उन्हीं कृष्ण को आराध्य माना, जिन्हें द्रौपदी ने अपने घोर संकटकाल में अपनी रक्षा के लिए पुकारा था। मीरा के लिए भी उनका परिवार तथा उनके समय का हित समाज अपनी जड़ीभूत मान्यताओं के साथ कठोर होता गया। मीरा ने भी गोपिका वल्लभ में ही नारी स्वाधीनता का अनुभव किया। उन्होंने राणा द्वारा दिये गये समस्त उपभोगों का त्याग करते हुए अपने व्यक्तित्व की स्वतंत्रता को सार्थक किया। भक्ति और साधु संगति में मीरा का भावलोक ही समृद्ध नहीं हुआ था, अपितु उनकी दृष्टि व्यापक और उदार होती गयी थी। इसीलिए अपनी भक्ति और व्यक्तित्व पर चौतरफा प्रहार झेलते हुए भी वे कभी अपनी निष्ठा से विचलित नहीं हुईं। देखा जाये तो राजसत्ता के रूप में शासक राणा, वंश की कुलीनता की दावेदारी लेकर राणा कुल के स्त्री-पुरुष और शेष रुढ़िवादी समाज बहुत संगठित होकर मीरा पर प्रहार कर रहा था, किन्तु मीरा न राणा से आतंकित थी और न उन्हें कुलीनता की कोई परवाह थी। स्त्री के प्रति अमानवीय विधि-निषेधों से लैस रुढ़िवादी समाज के लिए तो उनके प्रखर स्वाभिमानी व्यक्तित्व की आंच ही यथेष्ट थी।"[6]

इस प्रकार मीरा अपने समय के समाज की सामंती पतनशीलता से संघर्ष करती हुई एक आत्मनिर्भर स्वाधीन व्यक्तित्व के रूप में मध्ययुगीन भक्तिकाव्य धारा में अपनी एक अलग और अनूठी छाप छोड़ती हैं। उनमें एक असाधारण स्त्री का ग्रहण और त्याग का विवेक है। वे स्वाधीन तो हैं, किन्तु स्वछंद नहीं हैं। गोकुल-वृन्दावन जैसे मानवीय गुणों से युक्त साधु समाज का स्वप्न देखती हैं। उनका संघर्ष असाधु, अन्याय और असत्य से है। राणा में ये तीनों प्रवृत्तियां मौजूद हैं। मीरा इन प्रवृत्तियों पर तीखी चोट करते हुए कहती हैं :

विध विद्वणा री म्यारा। टेक।।
पौरख नेग मिरच हूं देखा कगतण फिरता मारा।
उजलो बरण बागला पावां कोयत वरणां कारा।
नक्ष्यां नक्ष्यां निरमल धारां समुंद करयां जत खाएं।
सूरत जण सिंघासण राजा पण्डित फिरतां द्वारा।
भौरा रे प्रभु गिरधर नागर राणा भगत संपात।[7]

इस पद से मीरा की विकसित सामाजिक चेतना और राजनीतिक विवेक का ज्ञान होता है। यहां मीरा राजसत्ता के दमनकारी अमानवीय रूप को उद्टित करने के साथ-साथ अन्याय और दमन के लिए संगठित जड़ समाज पर भी प्रहार करती हैं। यहां मध्ययुगीन समान की विसंगतियों के प्रति मीरा का स्वर तीक्ष्ण व्यंग्यात्मक है। वस्तुतः विसंगत यथार्थबोध के प्रति मानवीय चित्त की सबसे भावुक अभिव्यक्ति व्यंग्य है। मीरा के कई पदों में व्यंग्य की एक गहरी अन्तर्निहित धार पहचानी जा सकती है।

निष्कर्ष

मीरा ने केवल राणा, राणाकुल रूढ़िवादी समाज से ही संघर्ष नहीं किया था। जैसा कि हम जानते हैं कि उन्हें साधुवेश में आने वाले असाधुओं से

भी जूझना पड़ा। वैष्णव भक्तिधारा में भी कुछ ऐसी संकीर्णता थी, जिन्हें मीरा जैसी तपस्विनी नारी नहीं सह सकती थी। ऐसा ही एक प्रसंग मीरा के पुरोहित रामदास द्वारा वल्लभाचार्य जी का भजन गाने का है। मीरा ने उनसे असुर जी का पद गाने का अनुरोध किया। पुरोहित ने इसे वल्लभाचार्य जी का अपमान समझा और मीरा को घोर अपशब्द कहे।"[8] इस प्रकार के असाधुओं से मीरा का पाला पड़ता ही रहता था, किन्तु उनमें साधु और असाधु को पहचानने का विवेक तो था ही। साथ ही अद्भुत क्षमाशीलता और विनम्रता भी थी।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 https://www.anhadkriti.com

2 मीरा, परिचय तथा रचनाएं, सं. सुदर्शन चोपड़ा

3 मीराबाई की सम्पूर्ण पदावली, सम्पादक : रामकिशोर शर्मा, सुजीत कुमार

4 मीराबाई और भक्ति की आध्यात्मिक अर्थनीति, कुमकुम संगारी

5 मीरा की प्रेम साधना, डॉ.भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'

6 मीराबाई का काव्य, भक्ति एवं दार्शनिकता, डॉ.शैलेष के. मेहता

7 मीराबाई की पदावली, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

8 मीरा संचयन, सम्पादक : नन्द चतुर्वेदी